ISSUE-34| VOL- 5 | IIJIF Impact-8.712| ISSN-2454-6283 | Oct-Dec.,-2023 |

1.'यथा प्रस्तावित' और 'परिशिष्ट' उपन्यासों में चित्रित सामाजिक विद्रोह

–प्रा.डॉ.प्रदीप रेवाप्पा सरवदे
अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
तुळजाराम चतुरचंद महाविद्यालय,बारामती, जि.पुणे. (महाराष्ट्र)

समकालीन हिंदी कथा साहित्य के बहुमुखी प्रतिभा संपन्न एवं यथार्थवादी साहित्यकार के रूप में गिरिराज किशोर ख्यातकीर्त हैं। उन्होंने अपनी आयु में जो देखा, भोगा उसे अत्यंत निर्भयता के साथ अंकित किया है। संघर्ष और लेखन को अपना धर्म माननेवाले गिरिराज किशोर अन्याय के विरूद्ध हमेशा बेचैन रहे हैं, भविष्य के प्रति आस्थावान रहे हैं। उनकी दृष्टि से जिस साहित्य में लोगों का दर्द, संघर्ष अंकित होता है, उसे सच्चा साहित्य मानना चाहिए। इसलिए वे कहते हैं यथार्थ

के होते हुए भी समय होने पर दफ्तर छोड़कर घर चला जाना आदि अनेक आरोप रखे जाते हैं। जाँच रपट के आधार पर उसे नौकरी से दूर करने का प्रस्ताव रखा जाता है। इसके सिवा उसके छोटे बच्चे को खटोले पर से उलट देना, घर को जलाना, बूढ़े माँ–बाप तथा बेटे की दवा के अभाव में मृत्यु होना, पूर्वाग्रह मिश्रित घृणा के कारण उसे निलंबन अवधि का वेतन न देना आदि अनेक अमानवीय यातनाओं से तंग किया जाता है, परिणामतः अंत में वह पागल हो जाता है। स्वयं लेखक के शब्दों में "बालेसर पगला गया था। यह पहली बार था, जब उसने मानसिक संतुलन खोया था। वह सीना पीट–पीट कर चिल्लाने लगा कि अगर मेरे बच्चे को मरहम–पट्टी नहीं हो सकती तो मैं भी अपनी जान यहीं दे दूँगा । आप लोगों की ज्यादतियों से मेरे तीन बच्चे जाते रहे और मैं जिंदा रहूँ, यह नहीं हो सकता। अब मैं भी अपनी जान देकर ही मानूँगा ।"[3] इससे बढ़कर गरीबी की विडंबना और क्या